Volume 8, Issue 4, (Oct-Dec 2020)
Impact Factor: 5.659 [ISSN: 2348 - 2605]
Peer Reviewed Refereed 'kks/k if=dk

"नादिरा ज़हीर बब्बर के नाटकों में अभिव्यक्त में सामाजिक यथार्थ : 'सकुबाई' के विशेष संदर्भ में"।

डॉ. जयश्री ओ. , असिस्टेंट प्रोफसर,
हिंदी विभाग, यूनिवर्सिटि कॉलेज, तिरुवनंतपुरम, केरल।

आज का युग जटिलताओं एवं विघटन की स्थितियों से जूझ रहा है। युगानुरूप तथ्य और अतथ्य, विवेक और अविवेक को उसके असलियत के साथ समाज समुख प्रेक्षित करना ही समाजवादी लेखक का दायित्व है। वह कल्पना से दूर रहकर सत्य का अन्वेक्षक, पक्षधर एवं प्रचारक बनकर सामाजिक जटिलताओं तथा सामाजिक अड़चन से मुक्ति का मार्ग प्रश्स्त करके समस्त मानव जाति को एकसूत्र में बाँधने का प्रयास करता है। वास्तव में वह अपने साहित्य में जीवन की स्पन्दनों की अभिव्यक्ति करता है।ऐसा एक महान हस्ती हैं नादिरा ज़हीर बब्बरजी। आपका सारा साहित्य सामाजिक यथार्थ का आईना है।"जी जैसी आपकी मर्ज़ी, सुमन और सना, सकुबाई, दयाशंकर की डायरी,ऑपरेशन क्लाउडबसर्ट" जैसे अपने सभी नाटकों में नादिराजी सामाजिक यथार्थ के कई उपस्कारों को यथाकथित अनावृत करती हैं।

जातिवाद,धर्मांधता,वर्गभेद,आतंकवाद,शोषण,अन्याय,भ्रष्टाचार जैसे सभी सामाजिक विसंगतियों एवं विद्रुपताओं का बाह्य एवं आंतरिक रूप से परखकर उसे शब्द या वाणी का रूप प्रदान कर उन्होंने यथार्थता के साथ प्रस्तुत किया है। इस दृष्टि से आपका नाटक ''सकुबाई"एकदम खरा उतरता है। इस नाटक में लेखिका ने बहुत छोटी उम्र में रोटी कमाने केलिए बाध्य होकर गाँव से अपनी माँ के साथ बंबई शहर में आयी शकुंतला(सकुबाई) नामक एक स्त्री के खुले जीवन की कथा द्वारा विषम आर्थिक परिस्थितियों में जीनेवाली श्रमजीवी वर्ग के प्रति श्रद्धा दिलाते हुए मालिकों, धनिकों और उद्योगवर्ग के काले कारनामों का पर्दाफाश करने का प्रयास किया है।

Volume 8, Issue 4, (Oct-Dec 2020)
Impact Factor: 5.659 [ISSN: 2348 - 2605]
Peer Reviewed Refereed 'kks/k if=dk

आर्थिक विपन्नता के कारण उत्पन्न होनेवाले सामाजिक और पारिवारिक द्वन्द्व का अत्यंत करुण और मनोवैज्ञानिक चित्रण नादिराजी ने सकुबाई के माध्यम से किया है। आर्थिक वैषम्य के कारण ही सकुबाई को अपनी छोटी ही उम्र में घर का सारा भार अपने कंधों पर झेलने और शिक्षा जैसे बालसुलभ अधिकारों से भी वंचित रहने दिया - ".....मैं पाठशाला जाने केलिए बहुत रोयी थी। इस पर मेरी माँ ने ज़ोर से एक थप्पड मेरे गाल पर मारा और बोली- 'तू पाठशाला जाएगी? तू पाठशाला जाएगी तो घर का काम कौन करेग?" 1 निर्धनता की चक्की में पिसते हुए उस निरीह वर्ग को जीवन भर अभाव की ऐसी ज़िन्दगी ढो रहना पडता है। बारिश में अपने घर को ठीक करने के बजाय दूसरे घरों को ठीक करने की स्थिति सकुबाई के किरदार में आने का कारण भी यही है। निर्धनता के असहनीय बोझ से त्रस्त होने के कारण ही गरीबी वर्ग जीवन की सुख सुविधाओं से सदा वंचित रहता है।वह भूख से बेहाल और स्थिति से फटेहाल है। गरीब आदमी दो वक्त की रोटी केलिए मोहताज है।मालकिन के बेटे पामोल को दूध पिलाने केलिए उसके पीछे-पीछे दौड़ लगाना और फिर भी दूध नहीं पीना,चंद रुपये की खातिर सकुबाई की मनोदशा के साथ-साथ परिवार के पालन-पोषण की विवशता दर्शाती है- "अरे बाबा रौकी बाबा को एक गिलास दूध और चार बिस्किट खिला दिए तो सकुबाई ने बहुत बडा काम कर दिया।...और हमारे बच्चे.....हमारे बच्चों क्या?....। हमारे हाथ में एक गिलास दूध और चार बिस्किट हों तो हमारे दस बच्चे हमारे पीछे दौडेंगा.....।"[2] गरीबी की मार झेलता हुआ इंसान दुनियादारी के सभी मोर्चे पर अपने को असहाय महसूस करता है। एड्स से पीडित अपने पति को लेकर सरकारी अस्पताल में गयी सकुबाई हताश होकर बिलकती है कि "मैं तो कहती हूँ कि गरीब के बीमार होने से अच्छा है उसका मर जाना।"[3] वास्तव में दीनता का यह स्वर केवल एक सकुबाई का नहीं बल्कि गरीबी से पीडित सैकडों सकुबाईयों का है। वे जानते हैं कि अर्थ के बिना

Volume 8, Issue 4, (Oct-Dec 2020)
Impact Factor: 5.659 [ISSN: 2348 - 2605]
Peer Reviewed Refereed 'kks/k if=dk

जीवन की सत्ता ही संभव नहीं। यदि ईश्वर और धर्म को प्राप्त करना हो तो उससे पहले अर्थ की पूजा करनी होगी। आज अर्थ ही सकल सृष्टि का भगवान बन बैठा है। सकुबाई के ही शब्दों में- "हम लोग मेहनत करते-करते बूढे हो जाते हैं.....और मर जाते हैं। न कोई हमें पूछता है न याद करता है।.....अरे रोने और याद करने केलिए भी तो टाइम चाहिए। .....और टाइम है किसके पास ?.....फिर छुट्टी करेंगे तो दूसरी बाई रख लेंगे। .....भगवान ने भी इतने सारे दुख हमारे हिस्से में दे दिए.....अरे क्या अल्लाह, क्या भगवान.....सब एक दूसरे की मिलीभगत है। सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं।"[4]

"सकुबाई" के द्वारा नादिराजी ने तत्कालीन समाज में व्याप्त विसंगतियों का लेखा-जोखा वर्णन के साथ-साथ अपने को सभ्य एवं पोश माननेवाले संपन्न वर्ग के पाखंड एवं ढोंग का यथार्थ चित्रण भी किया है।अभावग्रस्त ज़िन्दगी जीते समय भी गरीबी वर्ग कभी भी सत्य या ईमानदारी को नहीं छोडते हैं। यहाँ नादिराजी ने शिक्षित एवं अपने को सभ्य माननेवाले उच्चवर्ग के लोगों के बीच में होनेवाले झूठ-फरेब तथा उससे उत्पीडित मज़दूर वर्ग की मानसिकता पर भी प्रकाश डाला हैं। हर पेट फूला आदमी धन की अतिरिक्त चाह पूर्ति केलिए मक्कारी या झूठ-फरेब के अनेकानेक रास्ता अपनाता है। यही नहीं गरीब की ईमान और इज्जत को पल-पल में कलंकित कर देने में ये वर्ग नहीं हिचकते हैं। ऐसी एक गलत धारणा है कि समाज में चोरी, कलंक या धोखेबाजी केवल गरीब वर्ग ही करते हैं न कि संपन्न लोग। सकुबाई की मेम साहब की हीरे की अंगूठी उसके सभ्य मित्र द्वारा चुराया जाता है। यह खबर देने पर मेम साब सकुबाई से कहती है कि "सकुबाई ! वो बहुत बडे आदमी की वाइफ है।"[5] सकूबाई बडी चालाकी से मेमसाब के मित्र के पर्स से अंगूठी को छीनकर मेम साहब को देकर अपनी इज्जत की रक्षा करती है। नहीं तो यह चोरी उसके सिर पर ज़रूर पड़ जाएगी। इसमें कोई शंका नहीं है।सकुबाई अपनी इज्जत की रक्षा करते हुए कहती है कि बडप्पन कर्म पर होना चाहिए न कि धन से- "अरे बडे आदमी की वाइफ को वैसा बडप्पन भी तो आना चाहिए और फिर अमीर होना बडप्पन की गारण्टी तो नहीं।"।[6]

Volume 8, Issue 4, (Oct-Dec 2020)
Impact Factor: 5.659 [ISSN: 2348 - 2605]
Peer Reviewed Refereed 'kks/k if=dk

टेक्नॉलजी के इस युग में सभी क्षेत्र में हम प्रगति के पथ पर अग्रसर हो चुके हैं। यह कोई तर्क की बात नहीं है। लेकिन खेद की बात यह है कि नैतिकता के स्तर पर हम पतन की गर्त में गिर पडे हैं। दिन-व-दिन बढती नारी उत्पीडन या बलात्कार की खबर इसका द्योतक है। विवेच्य नाटक में भी लेखिका इस तथ्य की ओर इशारा करती है कि आजकल नारी ना तो अपने घर में भी सुरक्षित है ना कि बाहर। वह अपने ही साथी, सहकर्मी, सहयोगी या परिवार के ही किसी संबंधित

द्वारा प्रताडित, अपमानित या बलात्कार की शिकार बनती है। यहाँ सकुबाई भी पंद्रह साल की उम्र में अपने ही मामा से पीडित हो जाती है। पुरुष के ऐसे पाशविक क्रूर व घिनौनी मानसिकता का शिकार बेचारी नारी जीवनभर आत्मसंघर्ष की आग में जलती रहती है – "ऐसे कितने सारे अपमान हम औरतें इसलिए सह लेती है कि घरों में कोई क्लेश न हो। चाहे वो क्लेश, हमें जीते-जी जलाते रहे.....।[7]इसीप्रकार बदलते हुए सामाजिक परिवेश में विवाह का महान आदर्श भी आज समाज से लुप्त हो रहा है। विवाह सूत्र में बाँधना आसान है उसे निभाना ही मुश्किल है। पति-पत्नी बनकर सफल वैवाहिक जीवन जीने केलिए दोनों को कुछ-न-कुछ त्याग करना पडता है। लेकिन त्याग की जगह आज भोग ने ली है। कुछ लोग विवाह से बाहर संबंध रखकर अपनी विवाहित ज़िंदगी तबाह करते हैं। नादिराजी " सकुबाई "में उच्च-मध्य वर्ग के सफेदपोश पारिवारिक जीवन में व्याप्त विवाहेतर काम संबंधों का वर्णन इसप्रकार करती है कि ".....और सोचने लगी.....कि इसमें और मिश्राईन में क्या अंतर है.....? यही न कि ये इंगरेज़ी में सबको हाय-हाय करती है।.....सबके सामने लोगों से लिपट जाती है। मिश्राइन जो भी करती है वो इसलिए कि उसे उसके बूड्ढे आदमी में जो नहीं मिलता वो मेरे आदमी में ढूंढ लेती है।.....मगर ये ऐसा क्यों करती हैं.....?इसलिए न कि इस काम मिले। दाम मिले।.....फिर अनपढ लोग ही औरतों को नहीं मारते.....पढे-लिखे भी मारते हैं।"[8]

वर्तमान नारी अपनी अस्मिता या अपनत्व के प्रति सजह है। वह अपने प्रति होनेवाले अत्याचारों व अन्यायों को चुपचाप सहन नहीं करती। वह उसके विरुद्ध आवाज़ उठाती है।

Volume 8, Issue 4, (Oct-Dec 2020)
Impact Factor: 5.659 [ISSN: 2348 - 2605]
Peer Reviewed Refereed 'kks/k if=dk

पति से मार खाने पर अपने माइके चलने मेम साहब से सकुबाई कहती है कि "आप क्यों जाओगी मम्मी के घर?.....ये घर आपका भी तो है। आपका अपना ब्यूटी पार्लर है।.....आप अपने घर पर रहो। पहले अपने को ठीक करे। और अपने बच्चों को संभालो।"[9] इससे प्रभावित होकर पूजा कपूर स्वयं निर्णय कर लेती है कि अपने अस्तित्व या अपनत्व को खोकर जीने की ज़रूरत नहीं। और अपने पति को ललकारती है –"तुम्हें जो करना है करो।.....मेरा घर।....मेरा ब्यूटी पार्लर..। मेरे बच्चे।"[10] इसीतरह नादिराजी शहनाज के चरित्र द्वारा सामाजिक एवं धार्मिक रूढियों का अंधानुकरण करके अपने अस्तित्व को खो बैठनेवाले नारी वर्ग से उन्हीं अंधविश्वासों को छोडकर सदा ईश्वर पर भरोसा रखकर आत्मविश्वास से आगे बढाने का आह्वान देती हैं। हमेशा पर्दा डालकर अपने पति की छाया में रहनेवाली शहनाज पति की मृत्यू के उपरांत अपने परिवार की आजीविका केलिए क्राफेड मार्केट में मर्दों की दुनिया में मर्दों के बीच पति द्वारा चलाये गये प्लास्टिक दूकान को चलाने पर चारों ओर से उसकी आलोचना होने लगी। लेकिन उसने हिम्मत नहीं हारी और बच्चों से कहा कि "बच्चो तुम घर संभालो।मैं दूकान संभालती हूँ और फिर क्या दूकान चली कि पूछो मत....।आगे लेखिका कहती है कि इतनी हिम्मतवाली औरत....लेकिन उसके पास इतनी हिम्मत कहाँ से आई ?..... अरे बाबा ये हिम्मत उसे उसके अल्लाह ने ही तो दी होगी.....।"[11] यों नादिराजी ने समूचे नारी वर्ग से आत्मविश्वास और हिम्मत को हथियार बनाकर अपनी अस्मिता को पहचान लेने का आह्वान देती हैं।

प्रस्तुत नाटक में समाज में व्याप्त विभिन्न विसंगतियों के यथार्थ चित्रण के साथ-साथ बढती हूई शिक्षित लोगों की बेरोजगारी पर भी प्रकाश डाला गया है। श्रमिक वर्ग की बेकारी उतनी चिंत्य नहीं है जितनी कि शिक्षित वर्ग की। सकुबाई के यहाँ सामान बेचनेकेलिए आये व्यक्ति की ओर संकेत करते हुए सकुबाई कहतीहै कि ".....पर ये तो पढी-लिखी होगी बारहवीं-चौदहवीं.....हमतो एकदम अनपढ है।.....ए देवा ∫∫ क्या ज़माना आ गया है। पढे-लिखे लोग भी घर-घर घूमते हैं। और अनपढ भी।.....चलो इस बात में तो हम लोग बराबर हुए।"[12]

Volume 8, Issue 4, (Oct-Dec 2020)
Impact Factor: 5.659 [ISSN: 2348 - 2605]
Peer Reviewed Refereed 'kks/k if=dk

सामाजिक विसंगतियों के विभिन्न पहलुओं के यथार्थ चित्रण के साथ नादिराजी प्रस्तुत नाटक में मानव के रागात्मक संबंध की मार्मिक व्यंजना भी करती हैं। आज की बाज़ारवादी युग में रिश्ते बिकाऊ बन गए हैं। परिवार में मानवीय संवेदनाएँ दम तोड रही हैं। मातृत्व-पितृत्व जैसे मूल्य बुहारकर फेंक जा रहे हैं। धन-दौलत या सामाजिक बडप्पन की चिंता में पड़कर लोग मानवीय संवेदना को भूलकर आत्मकेंद्रित बन चुके हैं। लेकिन गरीब लोग स्वार्थता के ऐसे बंधन से सर्वदा मुक्त रहते हैं। उन्हें केवल अपने भूख मिटाने की चिंता रहता है न कि किसी बडप्पन की। इसलिए ही उन लोगों केलिए रक्तसंबंध बढा गाढ़ा होता है। प्रस्तुत नाटक की नायिका सकुबाई का जीवन इसका जीवंत उदाहरण है। दूसरे घर के बर्तन माँजकर अपने भाई केलिए उचित शिक्षा का प्रबंध करना, किसी से भाग लिए अपनी बहन की सहायता केलिए गोपनीय से पैसा इकड्ठा करना, बूढे माँ-बाप तथा रोग से पीडित अपने पति की सेवा-शुश्रूक्षा करना आदि सकुबाई की मानवीय संवेदना का द्योतक है। खास बात यह है कि उसकी यह भावात्मक लगाव केवल अपने माँ-बाप तथा भाई-बहन तक सीमित नहीं, बल्कि अपने मालकिन तथा पास-पडोसियों सब के प्रति होता है जिसके सामने हम जैसे पाठक एकदम नतमस्तक होते हैं।

वर्तमान समाज में आर्थिक स्तर से संपन्न लोग अपने माँ-बाप को वृद्ध सदनों में थकेल देते हैं। अत्यंत कष्टताएँ झेलकर माँ-बाप अपने बच्चों को पढा- लिखाकर बडा बनाते हैं लेकिन वह किसी पद पर आसीन होने पर वे अपने माँ-बाप को भूल जाते ही नहीं दूसरों के सामने मैले-कुचले उन बूढों को अपने माँ-बाप कहने में हिचकते हैं। नादिराजी विवेच्य नाटक में मातृ स्नेह का जो अप्रतिम रूप हम पाठकों के समक्ष उपस्थित करती है वह अप्रतिम है। युवकवयित्री की पुरस्कार वेदी से निकलकर स्वयं साईली सभा में बैठी अपनी माँ सकुबाई का हाथ पकडकर ले जाती है और कहती है कि "ये मेरी आई.....।मेरी माँ.....जिसकेलिए मैंने ये कविता लिखीं।..... "आई बहुत मेहनत कर ली तूने.....। अब तेरा काम पर जाना बंद। अब तू घर बैठकर आराम करेगी।.....अब अपने अच्छे दिन आ गए हैं। तू पढना चाहती थी न.....पढ।"[13]सकुबाई याद करती है कि बचपन में स्कूल

Volume 8, Issue 4, (Oct-Dec 2020)
Impact Factor: 5.659 [ISSN: 2348 - 2605]
Peer Reviewed Refereed 'kks/k if=dk

जानेकेलिए रोने पर माँ ने अपने को थप्पड मारा था।अब उसकेलिए अपनी लडकी मुझे प्रेरित करती है।

यों नादिराजी अपने नाटक "सकुबाई" में सामाजिक सच्चाईयों का जीवंत चित्रण करने के साथ-साथ मानव को मानव से, उसकी परिस्तिथियों से, उसके आसपास के माहौल से परिचित कराती है। यहाँ गरीब या मज़दूर वर्ग के जीवन स्तिथियों, विषमताओं, समस्याओं व शोषण के यथार्थ चित्रण के साथ संपन्न वर्ग की संकुचित स्वार्थवृत्ति, शोषण, विलासवृत्ति, बाह्य सदाचरण, आंतरिक दुराचरण आदि पर प्रकाश डाला गया है। लेखिका ने सकुबाई के चरित्र द्वारा आर्थिक दबाबों से पीडित गरीब वर्ग के मानसिक अंतर्द्वन्द्व, मानवीय संबंधों की ऊषमलता एवं नारी अस्मिता का जो स्वर यहाँ उपस्थित की है वह अनुपम और अप्रतिम है।

विश्वप्रसाद तिवारी के शब्दों में –"रचना भी एक सामाजिक कर्म है,क्योंकि वह अंततः जीवन को पहचानने और एक बहत्तर ज़िंदगी और एक बहत्तर दुनिया के निर्माण केलिए एक सचेत सर्जात्मक कर्म।"[14] हम निस्सन्देह कह सकते हैं कि नादिराजी का नाटक "सकुबाई" भी जीवन को पहचानने और बदलने की प्रेरणा देता है और ऐसा एक बहत्तर दुनिया की कामना करता है कि जहाँ सामाजिक समत्व हो, और युगों से गरीबों की सुख-सुविधाओं को छीननेवाले संपन्न वर्ग अपने को सुधर कर स्वयं बदलने केलिए तैयार हों-

"आज वो तुझसे माफी माँगने आया है
कि उसने तेरे साथ बडा अन्याय किया
पर वो कहता है कि वो अब अपने का सुधारेगा।
अपने आप को बदलेगा, एक नया युग लेकर आएगा
माँ उठ,सर उठा,देख समय आया है।"[15]

Volume 8, Issue 4, (Oct-Dec 2020)
Impact Factor: 5.659 [ISSN: 2348 - 2605]
Peer Reviewed Refereed 'kks/k if=dk

आधार ग्रंथः सकुबाई - नादिरा ज़हीर बब्बर-वाणी प्रकाशन- लेखकीय संस्करण -2018

संदर्भ :

1.सकुबाई - पृष्ठसंख्य -21

2 सकुबाई - पृष्ठसंख्य –19

3. सकुबाई - पृष्ठसंख्य -57

4. सकुबाई - पृष्ठसंख्य -49

5. सकुबाई - पृष्ठसंख्य -52

6. सकुबाई - पृष्ठसंख्य -53

7. सकुबाई - पृष्ठसंख्य -3

8. सकुबाई - पृष्ठसंख्य -39

9. सकुबाई - पृष्ठसंख्य -39-40

10. सकुबाई - पृष्ठसंख्य -50

11. सकुबाई – पृष्ठसंख्य -51

12. सकुबाई – पृष्ठसंख्य-23

13. सकुबाई – पृष्ठसंख्य -62

14. सकुबाई – पृष्ठसंख्य- 63

15. प्रताप सहगल के साहित्य में समसामयिक विसंगतियाँ-डॉ.फ्रीडा फ्लविया डि 'सोजा-सनसाईन पब्लिकेशन – प्रथम संस्करण 2017-पृष्ठ संख्या-55